P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-1* April - 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'महुआचरित' में स्त्री मनोदशा का यथार्थ चित्रण

स्वाति
पुरातन छात्रा,
हिन्दी विभाग,
सी0 सी0 आर डी0 कालेज,
मुजफ्फरनगर, उ0 प्र0

सारांश

'महुआचरित' काशीनाथ सिंह द्वारा रचित उपन्यासों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। एक नारी के 'अस्मिता बोध' को पूरी निष्ठा के साथ इसमें दर्शाया गया है। 'देहासक्ति' से 'विवाह' तक की यात्रा में उपन्यास की नायिका महुआ की सघन व जटिल संवेदनाओं, मनोदशाओं का यथार्थ चित्रण काशीनाथ सिंह ने किया है। स्त्री के अन्दर उत्पन्न ईर्ष्या, बेबसी, अलगाव, घुटन, संत्रास, पीड़ा, आत्मग्लानि, चिंता, निर्भीकता आदि सूक्ष्म मनोभावों को काशीनाथ सिंह ने यथार्थता से प्रस्तुत किया है। स्त्री मनोविज्ञान की ऐसी सफल अभिव्यक्ति काशीनाथ सिंह की विशिष्ट प्रतिभा की परिचायक है। महुआ की मनः स्थितियों का व्यवहारिक रूप से अंकन उनके अथक परिश्रम का सार्थक प्रयास है जो पाठकों व आलोचकों को चुनौती देता है तथा कहन, कथा, चलन तीनों संदर्भों में नयेपन का सूत्रपात भी करता है।

मुख्य शब्द : काशीनाथ सिंह, मनोदशा, महुआचरित, अस्तित्वबोध, यथार्थ, निर्भीकता, ईर्ष्या, विक्षिप्त भाव, घृणा, क्रोध, आत्मग्लानि, रोंमाच, विद्रोह, आकर्षण, उत्तेजना, जोश।

प्रस्तावना

विगत् 50–60 वर्षों में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, परिप्रेक्ष्यों में समुचित बदलाव आये हैं। नारी जीवन के संघर्ष, रोमांस, स्त्री–पुरुष संबंध आदि विषयों पर अनेक रचनाकारों ने अपनी लेखनी से प्रकाश डालने की चेष्टा की है। साहित्यकारों ने स्त्री की मनोदशाओं का स्वाभाविक वर्णन करने का प्रयास किया है तथा इसमें अभूतपूर्व सफलता भी प्राप्त की है। ऐसे ही एक सफल साहित्यकार हैं काशीनाथ सिंह, जिन्होंने उपन्यास 'महुआचरित' के माध्यम से स्त्री की मनोदशाओं का बदलते परिप्रेक्ष्यों के संबंध में सफलतापूर्वक चित्रण किया है।

आत्मकथात्मक शैली में रचित इस लघु उपन्यास में अस्मिता बोध को तलाशती उपन्यास की नायिका 'महुआ' की सघन व जटिल संवेदनाओं को उकेरा गया है। आधुनिक सामाजिक परिदृश्य में एक शिक्षित एवं समर्थ नारी की विचारधारा, अन्तर्द्वन्द्व, स्वयं से किये गये प्रश्न, आत्मविश्लेषण, पाठक के सामने कई प्रश्न खड़े कर देते हैं। 'देहासक्ति' से 'विवाह' तक की यात्रा में महुआ में उत्पन्न ईर्ष्या, बेबसी, अकेलापन, आत्मग्लानि, घुटन, संत्रास व पीड़ा जैसी मनोदशाओं का सहज एवं ग्राह्य भाषा में प्रस्तुतीकरण हुआ है। काशीनाथ सिंह नारी मनोविज्ञान के कितने गहरे जानकार हैं, इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण 'महुआचरित' में दृष्टिगोचर होता है। एक पुरुष साहित्यकार द्वारा नारी भावनाओं की ऐसी यथार्थ अभिव्यक्ति इस उपन्यास को दुर्लभ कृतियों की श्रेणी में स्थान दिलाती हैं। स्वयं काशीनाथ सिंह इस बात को स्वीकार करते हैं कि उनका ज्ञान किताबी ज्ञान नहीं है, यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए यथार्थ जीवन से चरित्रों को परखना पड़ता है, ''मैं मानता हूँ सिद्धांत सूखे होते हैं जिन्दगी हरी होती है। मैंने किताबों से कम, व्यक्तियों के उदाहरणों से ज्यादा सीखा है। मैंने किताबें कम पढ़ी, आदमी ज्यादा पढ़े।''[1]

दैहिक जिज्ञासाओं एवं इच्छाओं के फलस्वरूप महुआ एक विवाहित युवक साजिद के आकर्षण में बंध जाती हैं। हर्षुल से विवाह के पश्चात भी वह मानसिक अन्तर्जटिलताओं से घिरी रहती है। पति के द्वारा किये गये छल एवं उसकी दोहरी मान्यताओं के कारण महुआ में अस्तित्व बोध जागता है और वह हर्षुल से रिश्ता तोड़कर हमेशा के लिए चल पड़ती है और अन्ततः निर्भीक होकर उसका सामना करती है– ''हर्षुल, मैंने तुम से कभी नहीं पूछा कि पिछले तीन साल से ही नहीं, आज भी तुम वर्तिका बनर्जी के साथ क्या कर रहे हो? क्या कर रहे हो जानती हूँ, लेकिन नहीं पूछूँगी, इतना याद रखना।''[2] स्वाभिमान व

निर्भीकता के भावों से भरी महुआ के इन शब्दों के माध्यम से काशीनाथ सिंह समाज के दोहरे मापदण्डों से असहमत स्त्री को चरित्रार्थ करते हैं। काशीनाथ सिंह स्वयं भी इस असमानता की निंदा करते हैं तथा साहित्य में इस समस्या को उचित स्थान न देने पर अपना विचार भी रखते हैं– ''पुरुष वर्चस्व सभी जगह है, जाने क्यों मुझे ऐसा लगता है कि लेखन ऐसा क्यों नहीं हो पा रहा है, न स्त्रियों न पुरुषों द्वारा। खुद स्त्री विमर्श करने वाले लोग अपनी बेटियों व स्त्रियों पर दोहरे मापदण्ड अपनाते हैं।''[3]

स्त्रियों के वास्तविक अन्तर्मन को उद्घाटित करते हुए काशीनाथ सिंह ने महुआ के इर्ष्या भावों को बड़ी कुशलता से अंकित किया है। समय पर विवाह न होने की कुढ़न महुआ की कुंठित मनोदशा को दर्शाती है। अपनी विवाहित सखियों के प्रति ईर्ष्या भावना एवं कुंठा महुआ के मन में घर कर जाती है– ''मैं उन्हें सुनती रहती हूँ और हाँ–हूँ करती रहती हूँ। मुझे उनसे जलन और ईर्ष्या होती, मन उदास और खिन्न हो उठता। बैचेनी बढ़ जाती।''[4] यह कैसी कुशल अभिव्यक्ति है एक ऐसी स्त्री की जिसका समय पर विवाह नहीं हो पाया तथा जिसकी सभी सखियों के विवाह हुए, लम्बा समय हो गया हो, उसकी कुंठित मनोदशा का सटीक चित्रण किया है काशीनाथ सिंह ने। बहुत बारीकी से वे महुआ के मनोद्वेगों का चित्रण करते हैं, लगता है जैसे यह सब स्वयं काशीनाथ सिंह के साथ ही घटित हो रहा है। काशीनाथ सिंह की विषय पर पकड़ की व्याख्या इन शब्दों में की गई है– ''काशीनाथ सिंह होने का अर्थ है, एक ऐसा लेखक जो समय की नब्ज को अँगुलियों से नहीं, उसके हर स्पन्दन को कलम की नोक से जाँचता है एक ऐसा लेखक जो हमारे व्यक्तिगत जीवन की परेशानियों में, हमारी निजी लड़ाई में भी शामिल है।''[5] भौतिक सुख के साथ दैहिक सुख की प्राप्ति का द्वंद्व महुआ के अंदर उसके अपने भाई के प्रति आसक्ति जैसे विक्षिप्त भावों को जन्म देता है। अवचेतन मन की यह सूक्ष्म परख काशीनाथ सिंह के शब्दों से व्यक्त होती है, ''जिस्म तैयार करती और जैसे ही उस पर एक चेहरा रखना चाहती, चेहरा मेरे भाई सुशांत का चला जाता।''[6] वस्तुतः इस प्रकार के कथन अनैतिक व असहज कथनों की श्रेणी में आते हैं परन्तु काशीनाथ सिंह का उद्देश्य पाठक को यथार्थ स्थिति से साक्षात कराना ही है जिसे वह स्वीकार भी करते हैं– ''साहित्य का काम पाठकों की चेतना का संस्कार कराना है, उसे समाज की वस्तुस्थिति से परिचित कराना है, सचेत कराना है।''[7]

स्त्री की नई संवेदनाएँ संस्कृति, धर्म व इस समूची व्यवस्था के पुर्नमूल्यांकन का आग्रह करती हैं। स्त्रियों के अनुभव भी पुरुष से भिन्न हैं। वह सभी सीमाओं व वर्जनाओं का विरोध करती है परन्तु अराजकता के पक्ष में भी नहीं रहती है। हर्षुल का छल महुआ के सुखी जीवन में अराजकता का अनुभव कराता है तथा उसमे हर्षुल के प्रति मोहभंग के भाव उत्पन्न होते हैं जो कभी–कभी क्रोध व घृणा का रूप ले लेते हैं, इन पंक्तियों से इसी मनोदशा का बोध होता है– ''मुझे लगा कि अपने घिनौने, डरावने और कालिख पुते चेहरे के साथ जिस औरत पर हर्षुल नाम का आदमी झुक रहा है, वह और कोई नहीं, मैं हूँ।''[8]

यहाँ हम देखते हैं कि काशीनाथ सिंह की भाषा तल्ख हो गयी है। फिर भी इसमें लयबद्धता है, यह प्रत्येक उस स्त्री के हृदय से उठ रहे आवेगों का सफल चित्रण है जिसे उसके पति ने छला हो– ''काशीनाथ जी की भाषा में तल्खी और रवानी का राज यह है कि वे समाज में गहरे धँसते हैं। वे भाषा गढ़ते नहीं, जीवन से लेते हैं।''[9]

महुआ के चरित्र–चित्रण में काशीनाथ सिंह ने यथार्थवादी दृष्टि रखते हुए निराशा, अकेलेपन व बेबसी जैसे भावों को शब्द दिये हैं। उम्र के महत्वपूर्ण पड़ाव पर देहासक्ति से उत्पन्न निराशा महुआ को परेशान कर देती है और वह डिप्रेशन का शिकार हो जाती है– ''डिप्रेशन में चली गई थी जैसे उस वक्त जब बाजार से गुजरती तो कनखियों से इधर–उधर देखने लगती कि लोग मुझे देख क्यों नहीं रहे हैं? कि कोई मेरी चाल पर कमेंट क्यों नहीं पास कर रहा है? कि उस बच्चे ने मुझे दीदी क्यों नहीं कहा? आंटी क्यों कहा?''[10]

समय के साथ–साथ स्त्री पुरुष संबंधों में भी व्यापक परिवर्तन आया है। आज स्त्री और पुरुष दोनों ही संबंध बनाने व तोड़ने के लिए स्वतंत्र हैं चाहे वह विवाहपूर्व हो या विवाहेत्तर। विवाहपूर्व संबंधों को रोमांच या थ्रिल का नाम दे दिया जाता है। यह दृष्टि नवीन परन्तु सत्यता की द्योतक भी है। साजिद के साथ संबंध बनाने को महुआ रोमांच का नाम देती है। उसके अन्दर डर, उत्तेजना, रोमांच, चिंता, जोखिम, विद्रोह जैसे सभी भाव उठते हैं जिन्हें काशीनाथ सिंह ने इन पंक्तियों द्वारा स्पष्ट किया है– ''और यह साजिद मेरा पड़ौसी और दो बच्चों का बाप साजिद मेरा 'कोई' हुआ। और इसे मेरे मन ने स्वीकार किया तो इसलिए कि इसमें 'एडवेंचर' के साथ 'थ्रिल' भी शामिल था। और वह जीवन ही क्या जिसमें 'थ्रिल' न हो।''[11]

आधुनिक समाज में स्त्रियाँ स्वतंत्र चिंतन के लिए स्वतंत्र हैं। स्त्रियों के प्रेम व आकर्षण भाव पर काशीनाथ सिंह ने महुआ के आत्मकथनों से विचारात्मक प्रभाव डाला है। वह आदर्शवाद को अस्वीकार करती है तथा दैहिक सुख पाने के लिए आकर्षण के भाव को भी सहजता से अपनाती है– ''मेरे लिए यह कोई साजिद था वरना वह 'शिशिर' या 'शशांक' या 'शुभम' भी हो सकता था। शर्त बस यह थी कि किसी न किसी वजह से वह मुझे भी अच्छा लगना चाहिए था।''[12] और प्रेम के लिए परिपक्व दृष्टि अपनाते हुए शुष्क भावों से प्रेम की प्रतिष्ठा करती है ''दस साल में वसुधा भूमण्डल हो जाती है और प्यार कूड़ेदान का कचरा। उसकी जगह डस्टबिन हो जाती है, दिल नहीं।''[13]

उपरोक्त कुछ उद्धरणों को देखें तो महुआ की सोच तथाकथित सामाजिक नियमों की दृष्टि से किसी भी रूप में सभ्य या श्लील नहीं कही जा सकती। किन्तु साहित्यकार का दायित्व है कि वह मनोभावों का वास्तविक चित्रण करे, सत्य को उद्घाटित करे, बिना यह देखे कि वह सभ्य है अथवा असभ्य, बस वह सत्य होना चाहिए। ''काशीनाथ सिंह ने प्रचलित भाषा को तोड़ने का काम किया है। वे लोक–जीवन की भाषा लेते हैं।

श्लील–अश्लील, भद्र–अभद्र पर ज्यादा सोच विचार नहीं करते।''[14]

परम्परा के प्रति विद्रोह की प्रवृत्ति तो मानव के मन के अंदर हमेशा से ही रही है परन्तु इनका अतिक्रमण कर पाना प्रत्येक मनुष्य के बस की बात नहीं है। स्त्री के हृदय में भी परम्परागत रूढ़ियों व मान्यताओं का अतिक्रमण करने का ख्याल जन्म लेता है परन्तु समाज के भय से वह बड़ा कदम नहीं उठा पाती है। इसी दमित भावना को काशीनाथ सिंह ने महुआ के भावों के माध्यम से वाणी दी है। विवाहपूर्व गर्भ ठहरने पर महुआ का मन उद्वेलित होकर कुछ क्षणों के लिए क्रांतिकारी विचारों से भर जाता है, वह जोश और उत्तेजना में काँपने लगती है– ''इस समाज के सामने एक मिसाल पेश करूँ और एक नये कबीर को जन्म दूँ जिसका न कोई मज़हब हो, ना जात, जो सिर्फ और सिर्फ मनुष्य हो?''[15] परन्तु यथार्थ की भयानक तस्वीर उसका मनोबल गिरा देती है और वह निराश हो जाती है।

गर्भ को समाप्त करने के पश्चात की आत्मग्लानि दुख व पीड़ा की व्याख्या मर्मांतक रूप में काशीनाथ जी ने इन शब्दों में की है– ''मैं किसी तरह उससे ध्यान हटाती तो एक मन कहता– नाचो, गाओ, खुशियाँ मनाओ कि बचा लिया अपना जीवन! बच गया तुम्हारा भविष्य! लेकिन तुरंत ही दूसरा मन कहता– डरपोक! कायर! ऑक् थूक!

काशीनाथ सिंह की भाषा–शैली प्रेमचन्द सरीखी है। वे अपने शब्दों के माध्यम से परिस्थितियों का सजीव चित्रण पाठकों के सम्मुख रख देते हैं। शब्दों का अधिक प्रयोग न करके, थोड़े में ही सटीकता से अपनी बात रख देते हैं। यही मुंशी प्रेमचन्द की विशेषता रही है। यह विशेषता काशीनाथ सिंह को एक विशिष्ट साहित्यकार के रूप में स्थापित करती है– ''काशीनाथ सिंह की रचनाओं में हमें एक महत्वपूर्ण बात दिखाई देती है, वे व्यर्थ और अनावश्यक नहीं लिखते। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक बातें और विवरण दे देते हैं। उनकी भाषा जीवन्त और संकेतात्मक है। उनके यहाँ कलाहीन सामाजिकता नहीं है। व्यवस्था का विरोध है किन्तु उपदेश नहीं है।''[16]

उद्देश्य कथन

किसी उत्कृष्ट रचना का निर्माण उसके पात्रों की संवेदनाओं के कुशल चित्रण के आधार पर ही संभव हो पाता है। संवेदना को ही 'कथ्य' अथवा 'वस्तु' कहा जाता है। काशीनाथ सिंह के लघु उपन्यास 'महुआचरित' में स्त्री संवेदनाओं एवं मनोदशाओं को प्रभावोत्पादक एवं व्यवहारिक भाषा शैली के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। आज के रचनाकारों की रचनाओं में संवेदनाओं तथा मनोभावों का ऐसा चित्रण विरले ही मिलता है। इस शोधपत्र के माध्यम से काशीनाथ सिंह की इन्हीं लेखन विशिष्टताओं को विश्लेषित किया गया है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात कहा जा सकता है कि 'महुआचरित' उपन्यास में स्त्री की मनोदशाओं का काशीनाथ सिंह द्वारा स्वाभाविक एवं यथार्थ चित्रण किया गया है जिससे रचना को जीवंतता मिली है। बदलते हुए सामाजिक परिदृश्य में स्त्री अनुभूति व संवेदनाओं के विविध पक्षों को प्रकट करना काशीनाथ सिंह का उद्देश्य है।

'महुआचरित' उपन्यास के माध्यम से काशीनाथ सिंह ने स्त्री मनोदशाओं के विविध पक्षों को समझाने, व्याख्यायित और विश्लेषित करने का प्रयास किया है। परम्परागत पुरुष प्रधान मानसिकता वाले समाज में स्त्री मनोविज्ञान की गूढ़ परतों को खोलते हुए काशीनाथ सिंह ने स्त्री के अन्तर्द्वन्द्वों, मनोभावों व मूल संवेदनाओं को भाषा के साँचे में बड़ी कुशलता से ढ़ाला है ताकि पाठकों द्वारा स्त्री के मन की गहराई में व्याप्त संवेदनाओं का मर्मस्पर्शी अनुभव किया जा सके और यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि लेखक अपने मंतव्य में पूरी तरह सफल रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *'काशीनाथ सिंह' का साक्षात्कार 'कृष्ण मोहन सिंह' द्वारा : ओपीनियन पोस्ट पत्रिका– अक्टूबर 2015, अंक*
2. *काशीनाथ सिंह : 'महुआचरित', पृ0सं0– 100*
3. *'मैं कहता आखिन देखी' : काशीनाथ सिंह का साक्षात्कार, प्रो0 रामकली सर्राफ द्वारा, वाङ्मय पत्रिका अलीगढ़, मई 2008 अंक*
4. *काशीनाथ सिंह : 'महुआचरित', पृ0सं0– 11*
5. *अभय : 'काशी होने का अर्थ है' (काशी पर कहन से), पृ0सं0– 438*
6. *काशीनाथ सिंह : 'महुआचरित', पृ0सं0– 29*
7. *'काशीनाथ सिंह' का साक्षात्कार 'कृष्ण मोहन सिंह' द्वारा : ओपीनियन पोस्ट पत्रिका– अक्टूबर 2015, अंक*
8. *काशीनाथ सिंह : 'महुआचरित', पृ0सं0–84*
9. *मनीष दूबे : सम्पादकीय, 'काशी पर कहन'*
10. *काशीनाथ सिंह : 'महुआचरित', पृ0सं0–30*
11. *वही, पृ0सं0–42*
12. *वही, पृ0सं0–41*
13. *वही, पृ0सं0–49*
14. *कमलाप्रसाद तथा संदीप लोटलीकर की बातचीत के अंश*
15. *काशीनाथ सिंह : 'महुआचरित', पृ0सं0–51*
16. *प्रो० कुवँरपाल सिंह : 'काशी के पास सच कहने का भी एक सलीका है', (कहन से)*